'महापंडित राहुल सांस्कृत्यायन'

– डॉ. रवींद्रनाथ मिश्र

राहुल सांस्कृत्यायन बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। धर्म, दर्शन, राजनीति, इतिहास, विज्ञान, साहित्य व्याकरण आदि अनेक विषयों में उन्हें समान अधिकार प्राप्त था। इसीलिए उन्हें महापंडित की उपाधि से विभूषित किया गया।

सन १९९३ राहुल सांस्कृत्यायन की जन्म सदी का वर्ष है। यह एक संयोग ही था कि इनका जन्म और मरण अप्रैल मास में ही हुआ। ९ अप्रैल को जन्मे और १४ अप्रैल को अंतर्ध्यान हो गए। इस जन्मसदी वर्ष को राहुल के व्यक्तित्व और कृतित्व के मूल्यांकन वर्ष के रूप में मनाया जाएगा जिसकी शुरुआत मानव संसाधन मंत्रालयने दिल्ली में कर दी है। इस अवसर पर मानवसंसाधन विकास मंत्री श्री-अर्जुन सिंह ने कहा कि– 'जब संकीर्णता धर्म परिषद बन जाये और वैचारिक ओछापन पांडित्य का लक्षण बन जाये, तो राहुल जी हमारे भीतर की जडता को झकझोर कर हमारे विचारोंको आंदोलित करने में सहायक हो सकते है।' (नवभारत टाइम्स, १० अप्रैल ९३.)

एक ऐसे व्यक्तित्व का मूल्यांकन जिसके विविध आयाम थे और एक ऐसी मनीषा की शोध जिसने व्यक्ति की शक्ति और सत्ता को सर्वोपरि मानकर संघर्ष का संदेश दिया हो, आसान नहीं। यहाँ हम राहुल जी की स्मृति में उनके उस व्यक्तित्व को रेखांकित करना चाहते हैं जिसने धुमक्कडी को मनुष्य का सर्वोपरि धर्म माना। इस सम्बन्ध में १० अप्रैल ९३ के नवभारत टाइम्स में संस्कृति विभाग के संयुक्त सचिव और प्रख्यात कवि, आलोचक अशोक वाजपेयी ने कहा कि– 'राहुल जी पारंपरिक किस्म के लेखक नहीं थे। वह भौगोलिक रूप में ही यायावर नहीं थे, बल्कि दृष्टि के भी यायावर थे।'

राहुल जी के विषय में कुछ और कहने के पूर्व उनके जीवन–दृष्टि को समझ लेना आवश्यक होगा। इनका जन्म एक सनातनी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। रूढि–जर्जर संस्कारों की श्रृंखला को तोड फेंकने की उनमें अद्‌भुत क्षमता थी। सर्व विदित है कि राहुल जीने किशोरावस्था में ही घर परिवार त्याग दिया था। शादी का बन्धन भी उन्हें बाँध नहीं पाया और भविष्य–चिन्ता तो जैसे उनके लिए कुछ न थी। वाराणसी आकर संस्कृत पढी और उसकी शास्त्रीयता के बंधन में न बंधकर सनातन धर्म से आगे बढकर उन्होंने आर्य समाज को अपनाया। फिर 'आर्य समाज' को छोडकर 'बौद्ध धर्म' ग्रहण किया और अन्त में उससे भी मुक्त होकर वे साम्यवादी या विशुद्ध मानवधर्मी हो गए।

राहुल जी यथार्थवादी थे। भौतिक जगत से परे के चिन्तन को महज खयाली मानते थे। उनका अनुभव था कि आध्यात्मिकता के प्रभाव से कुछ चंद लोगों का कल्याण भले ही हो जाए, सामान्यजन का कोई भला नहीं होता। उनके भौतिक चिन्तन ने उन्हें मार्क्सवाद से जोडा पर वहाँ भी मार्क्सवादी राजनीति

उनके आडे आई। जो दुनिया की सैर करने निकला हो और उसके बीच पडने वाली बाधाओं को चाहे वे किसी शक्ल में हो, नहीं मानता। उसे भला किसी ऐसे बन्धन में कैसे बांधा जा सकता था? राहुलजी भौतिक चिन्तक होकर भी कम्युनिस्ट नहीं रह पाए। उनकी स्वच्छंद प्रियता उन्हें कहीं बंधने न देती थी। वे जीवन और चिन्तन का अटूट रिश्ता मानते थे। इस रिश्ते के कारण ही वे वह करते थे जिसे करने की प्रेरणा उनके जीवन के अनुभव उन्हें देते थे। वे निरंतर गतिशील थे और नए ज्ञानानुभव की खोज में लगे रहते थे। जो कुछ जहाँ से मिले उसे लेने में उन्हें संकोच न था। खान-पान, आचार-विचार की औपचारिकताओं में उनका विश्वास न था। उनकी अदम्य जिज्ञासा उन्हें विश्व प्रपंच से दूर उस प्रकृत ज्ञान की ओर ले जाती थी, जिसमें करुणा का स्त्रोत है। मानवीयता की सही पहचान है। इसी ने उन्हें महापंडित बनाकर छोडा। बौद्धदर्शन से प्राप्त उनकी करुणा का स्त्रोत निरंतर प्रवाहित रहा।

वास्तविक रूप से राहुल जी उस भारतीय मनीषा का नेतृत्व करते हैं जिसमें लोक-चेतना और शास्त्रचिन्तन का द्वन्द्व निरंतर विकासमान रहता है और स्वीकृति अंततः लोक को ही मिलती है।

राहुलजी के व्यक्तित्व एवं चिंतन दृष्टि को जान लेने के पश्चात संक्षिप्त रूप से उनके कृतित्व की जानकारी प्राप्त कर लेना समीचीन होगा। राहुलजी को सैद्धान्तिक ज्ञान और यथार्थ अनुभव १९३५ ई. में रूस की यात्रा के बाद ही हुआ। १९३८ ई. में वे कम्युनिस्ट पार्टी के मेम्बर हुए। १९३७ ई. में उन्होंने रूस की दूसरी बार यात्रा की। इस प्रकार सन १९३९ ई. में उनकी दो पुस्तकें- 'सोवियत न्याय' और 'सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास' प्रकाशित हुईं।

वैज्ञानिक भौतिकवाद सन् १९४२ ई. में लिखा। 'हिन्दी काव्यधारा' का प्रकाशन १९४५ ई. में हुआ। निश्चय ही इस समय तक राहुलजी की जीवन-दृष्टि और-इतिहास-दृष्टि स्पष्ट और प्रौढ हो गई थी जिसका उल्लेख मैंने पहले ही कर दिया है। राहुलजी ने 'मार्क्स की जीवनी' सन् १९५३ ई. में लिखी।

इसके अतिरिक्त 'पुरातत्व निबन्धावली सन् १९३६ ई. में मध्य एशिया का इतिहास दो भाग १९५२ ई. में और 'अकबर' (१९५६ ई.) जैसे शुद्ध इतिहास ग्रंथ लिखे। सन् १९४४ ई. में 'सिंह सेनापति', जय, यौधेय (१९४४), 'मधुर स्वप्न' (१९४९ ई) और 'विस्मृत यात्री' (१९५३-५४) जैसे ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं। 'बोल्गा से गंगा' (१९४२ ई.) शीर्षक से देश के ऐतिहासिक विकास को स्पष्ट करने वाली कहानियाँ लिखी हैं और 'संस्कृत काव्यधारा' (१९५५ ई.) हिन्दी काव्यधारा (१९४५) तथा दक्खिनी काव्यधारा (१९५२) के रूप में भाषा और साहित्य के क्रम-विकास को भी निर्दिष्ट किया है।

संक्षिप्त रूप से राहुल जी की इतिहास-दृष्टि और हिन्दी काव्यधारा के विषय में प्रकाश डालकर अपनी बात समाप्त करूँगा। राहुल जी ने अंग्रेजों द्वारा लिखित इतिहासों पर विश्वास न करके प्रगतिशील भौतिकवादी दृष्टि से इतिहास को देखने की चेष्टा की है। उन्होंने हिन्दी काव्यधारा (अपभ्रंश काव्य) को जन-साहित्य के रूप में देखने का आग्रह किया है। उसे अन्य भारतीय आर्य भाषाओं के साहित्य से सम्बद्ध किया है और अनेक अज्ञात एवं अल्पज्ञात कवियों को सामने लाकर साहित्य के इतिहास की छुटी हुई कडियों को जोडा है।

इतिहास के विकास-क्रम में मानव को शोषण-मुक्त करने की उनकी निष्ठा, समाजवाद के प्रति उनकी प्रतिबद्धता और प्राचीन इतिहास के उद्धार के प्रति उनका समर्पण निर्विवाद है।

राहुल जी ने लोकभाषा और लोकसाहित्य के महत्व को पहचानकर उसे शिष्ट साहित्य के समकक्ष प्रतिष्ठित किया है। वे सदैव साधारण और सामान्य-जन को महत्व देते रहे हैं और रुढियों, अन्धविश्वासों, धार्मिक पाखण्डों तथा जड-संस्कारों को तोडने के विश्वासी रहे हैं।

उपयुक्त विचार इस समय प्रासंगिक हो गए हैं। आशा है कि राहुल जी की जन्मसदी बनाने से भारतीय जनमानस में व्याप्त विभिन्न क्षेत्रों में कटुता की भावना के स्थानपर सहिष्णुता, मानवता और सर्वधर्म समभाव आदि मानवीय भावनाओं का उदय होगा।

-०-